INTERNATIONAL ADVANCE JOURNAL OF ENGINEERING, SCIENCE AND MANAGEMENT (IAJESM)
July-December 2023, Submitted in August 2023, iajesm2014@gmail.com, ISSN -2393-8048
Multidisciplinary Indexed/Peer Reviewed Journal. SJIF Impact Factor 2023 =6.753

काल एवं समय में उपन्यास रचना : एक अध्ययन

श्रीमती अवि सुखीजा, शोद्यार्थी, हिन्दी विभाग, टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर (राज.)

शोध की भूमिका

''युग काल–प्रवाह का एक भाग है, जो किसी कार्य विशेष या घटना से जुड़कर ही युग कहलाता है। इसका प्रभाव साहित्यकार के दिमाग पर पड़ता है। यहाँ 'युग' शब्द का मुख्य अर्थ 'काल' से ही किसी–न–किसी रूप में जुड़ा है।'' आचार्य रामचन्द्र वर्मा और श्री कालिका प्रसाद के कोशों में भी यही अर्थ है। काल की अवधारणा बहुत अधिक सूक्ष्म और दुर्बोध है। युग कालवाचक शब्द है, लेकिन काल के निरपेक्ष प्रवाह को युग नहीं कहा जा सकता। ''किसी काल खण्ड को हम तभी युग कह सकते है जब उसे किसी देश के कालखण्ड से जोड़ दिया जाए। युग किसी देश के इतिहास के साथ जुड़कर अपनी सार्थकता प्रकट करता है।''

काल की परिभाषा में युग के साथ समाज की गतिविधियाँ और उनके प्रकार भी सम्मिलित हो जाते है। ''काल समाज की कलागत स्थितियों का प्रतिनिधित्व करता है। वह समाज, सभ्यता, संस्कृति, कला, साहित्य, इतिहास आदि सभी की आन्तरिक और बाह्य स्थितियों का बोधक होता है।'' ''युग इतिहास के कालखण्ड का ही भाग होता है। इतिहास का कोई ऐसा बड़ा काल जिसमें बराबर एक ही प्रकार के कार्य, घटनाएँ आदि होती रहती हैं।'' इस प्रकार काल शब्द में युग विशेष के स्पंदनों आदि को समाहित करके देखा जा सकता है।

काल शब्द व्यापक है, जो सम्पूर्ण मानव संस्कृति का काल–सापेक्ष अर्थ देता है। इसीलिए हिन्दी साहित्य के इतिहास के सन्दर्भ में जब हम किसी विशिष्ट युग अथवा काल की चर्चा करते हैं, तो उससे उस युग की सामान्य प्रवृत्तियों, परिस्थितियों और उपलब्धियों का बोध हो जाता है। भक्ति युग या काल कहने से हमें हिन्दी के स्वर्ण युग अथवा साहित्यिक दृष्टि से विकसित युग का बोध सहज हो जाता है। नई कविता की पृष्ठभूमि में डॉ० हरिशचन्द्र वर्मा ने युगबोध को आधार रूप में प्रतिष्ठित करते हुए अपना मत व्यक्त किया है –

''परिवर्तित परिवेश के सन्दर्भ में उगा हुआ नया अर्थ–बोध ही प्रत्येक युग की कविता के स्वरूप को निर्धारित करता है। अतः शास्त्रीय परिभाषाओं के आग्रह से मुक्त होकर यदि हर युग की कविता के मूल्यांकन का कोई नया प्रतिमान स्थापित किया जा सकता है तो वह युगीन अर्थ–बोध ही हो सकता है। नयी कविता के स्वरूप को जिस नवीन अर्थ–बोध ने निर्धारित किया है, उससे जुड़े आधुनिक राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय परिवेश में निहित है।'' डॉ० हुकमचन्द्र राजपाल ने युगबोध और व्यक्ति के सम्बन्धों की व्याख्या करते हुए उचित ही लिखा है कि ''युगबोध, आधुनिक युगबोध तथा आधुनिकता बोध इन तीनों में बोध शब्द का प्रयोग हुआ है। युग–बोध से सामान्यतः युग की मान्यताओं स्थितियों एवं सन्दर्भो का बोध होता है। इसलिए प्रत्येक युग का अपना एक विशिष्ट या सामान्य बोध अवश्य होता है।

समाज, सभ्यता, संस्कृति, कला, साहित्य, इतिहास आदि सभी की आन्तरिक और बाह्य स्थितियों का बोधक युग होता है। फलतः युगीन परिवेश में समाज का स्थान है।'' ''रचनाकार के मन पर अपने युग की समस्याओं का दबाव अवश्य ही होता है। कोई भी रचनाकार अपने युग से ऊपर उठकर उन भावों की खोज करता है, जिसका उसके समकालिक परिवेश में अभाव है और जिसकी उपलब्धि से युगीन विकृतियों का सांस्कृतिक समाधान खोजा जा सकता है। इस प्रकार युग–बोध के तीखेपन में से ही कवि मनीषा उदास जीवन–मूल्यों का अनुसंधान करती है।''

समाज में मानव अपनी विभिन्न जरूरतों और उद्देश्यों की पूर्ति करे और उन्हें मानसिक व सांस्कृतिक रूप से उन्नतशील बनाएँ अर्थात् समाज मानवीय जीवन को विकसित करने वाली महत्त्वपूर्ण संस्था है। समाज का अपने दायित्वों को पूर्ण न कर पाने के कारण समाज में असमानता, शोषण, धार्मिक कट्टरता, अन्धविश्वास, अज्ञानता आदि दोष आ जाते हैं। इन्हीं दोषों के फलस्वरूप व्यक्त की जाने वाली क्रिया–प्रतिक्रिया ही सामाजिक बोध का विचारात्मक रूप है जो समाज के क्रिया–कलापों को प्रतिबिम्बित करता हैं। यह भावों, मतों, सिद्धान्तों और जनता की सामाजिक भावनाओं और रीति–रिवाजों का योग है।

''राजनीतिक विचारधारा सामाजिक बोध का ऐसा रूप है, जिसके द्वारा वर्गों के सम्बन्ध, राज्य से युक्त समाज के विकास के एक या अन्य समाजों और राज्यों से उनके सम्बन्ध प्रतिबिम्बित होते है।'' वर्तमान युग में राजनीति वर्ग–संघर्ष दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। राजनीति वर्ग–संघर्ष के कारण अनेक आन्दोलन हो चुके हैं। अतः राजनीति–बोध को सामाजिक–बोध से अलग नहीं किया जा सकता, क्योंकि कोई भी ऐसा राजनीतिक आन्दोलन नहीं है, जोकि साथ ही साथ सामाजिक आन्दोलन न हो। राजनीतिक आन्दोलन के परिणामस्वरूप पुरानी सामाजिक व्यवस्था टूटती है। सामाजिक जीवन में तथा

उसके विकास में राजनीति की विशेष भूमिका रहती है। लेनिन के अनुसार ''अर्थशास्त्र के ऊपर राजनीति का प्राधान्य होना अनिवार्य है। विषय के प्रति समुचित राजनीतिक रूख रखे बिना कोई वर्ग अपना शासन कायम नहीं रख सकता और जिसके परिणामस्वरूप उत्पादन की समस्याएँ हल नहीं कर सकता।'' राजनीतिक बोध समाज के निर्धारण में अहम् भूमिका निभाता है।

हिन्दी शब्द सागर में धर्म का अर्थ स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि किसी वस्तु या व्यक्ति की वह वृत्ति जो उसमें सदा रहे, उससे कभी अलग न हो, स्वभाव या आचरण जो नित्य नियम जैसे हो, वह वृत्ति लोक या समाज की स्थिति के लिए आवश्यक हो वह आचार धर्म का सम्बन्ध किसी सम्प्रदाय विशेष न होकर मानव मात्र से है। धर्म के आश्रय से मानव अपने लौकिक एवं पारलौकिक कर्त्तव्यों को निभाता है। किसी भी राष्ट्र या समाज का वास्तविक रूप उसके धर्म द्वारा स्पष्ट होता है। धर्मविहीन राष्ट्र या समाज अर्मयादित और विश्रृंखलित हो जाता है। वैदिककाल में सबसे बड़ा धर्म कर्त्तव्य पालन माना जाता रहा है।

धार्मिक दृष्टिकोण में परिवर्तन आने के साथ ही सांस्कृतिक बोध भी परिवर्तित होता है, एक स्थिति ऐसी भी आती है जब व्यक्ति का दृष्टिकोण निरन्तर गतिशील, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक रूप में परिवर्तित हो जाता है। मनुष्य में व्याप्त गुण को मनुष्य का संस्कार, परिष्कार या संस्कृति कहते है। किसी भी समाज की संस्कृति के मूल्य, मान्यताएँ तथा नियम उस समाज की संस्कृति का निर्माण करते है।

युग–बोध की महत्ता उसके विकसित या परिवर्धित होने में है, इसलिए आदिकाल का युगबोध भक्ति युग से पृथक है तथा भक्तियुग से रीतियुग एवं आधुनिक युग का बोध सर्वथा भिन्न है।

''साहित्यकार किसी भी रचना का निर्माण करते समय कोई न कोई उद्देश्य लेकर अवश्य चलता है। अतः साहित्यकार साहित्य द्वारा सोये हुए समाज को जागृतकर उसे अच्छे मार्ग पर लाता है।'' ''साहित्यकार की दृष्टि सामान्य व्यक्ति से इतनी तेज होती है कि वह समाज में से कुछ निकाल लेती है। जिस पर सामान्य व्यक्ति की दृष्टि नहीं जाती। काल के प्रति उसकी दृष्टि एवं समझ गहन होती है।'' साहित्य किसी विशेष व्यक्ति की सम्पदा न होकर काल की सामूहिक रूप से अर्जित भाव सम्पत्ति होती है। एक पीढ़ी की मनीषा, साहित्य के माध्यम से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचती है। साहित्य के पुनीत तट पर खड़े होकर ही हम आदिकाल से चली आ रही ज्ञानधारा का सहज स्पर्श कर सकते हैं। ''युग की परिभाषा में काल के साथ समाज की गतिविधियाँ और उनके प्रकार भी सम्मिलित हो जाते हैं युग समाज की कालगत स्थितियों का प्रतिनिधित्व करता है।

मुख्य पिठिका

कालबोध एक दोहरी प्रक्रिया है, जिसमें एक ओर तो साहित्यकार युगीन यथार्थ को गहराई से देखते हैं, तो दूसरी ओर विसंगतियों के सम्यक् समाधान खोजने की चेष्टा करते हैं। युग परिवर्तन लोगों की मान्यताओं के कारण होता है। जब कोई मूल्य बहुत से समानधर्मी व्यक्तियों को प्रभावित करता है तब वह बोध वृति धारण करता है। इसी से 'युग–विशेष' का निर्माण स्वयं हो जाता है। बोध के कारण व्यक्ति सामाजिक दायित्त्वों एवं मूल्यों में स्वयं को आबद्ध मानता है; जबकि दृष्टि व्यक्ति को अनुबन्धों में बांधती है, इनका स्तर आन्तरिक है, इसमें संवेदना, आग्रह, परिवर्तन निरपेक्षता की स्थिति रहती है; जबकि बोध परम्परा का विकसित स्वर, दुराग्रह, अभिव्यंजना, प्रकरण, नियम, एकान्त की साधना का निष्कर्ष, व्यवस्था, मृत्यु एवं परावर्तन का द्योतक है।

उद्देश्य

1. नासिरा शर्मा के उपन्यासों में मनुष्य के सम्बन्धों की एकरूपता को रेखांकित करना।
2. नासिरा शर्मा की रचनाओं में पारम्परिक मूल्यों की स्थापना और नारी जागृति साहित्यिक धरोहर रही हैं को रेखांकित करना
3. रचनाओं में साहित्य की पुनरावृति नहीं, बल्कि साहित्य में वैविध्य दिखाई देता है, पर प्रकाश डालना।
4. नासिरा शर्मा की रचनाएँ अपनी कथनी पर कर गुजरने की क्षमता रखती है, को सिद्ध करना।

सारांश

साहित्य का सृजन जाने–अनजाने उसके व्यक्तित्व से गहरा ताल्लुक रखता है। इसी कारण किसी भी साहित्यकार के कृतित्व का अध्ययन करते हुए उसके व्यक्तित्व का अध्ययन भी महत्त्वपूर्ण हो जाता है। ''व्यक्तित्व में व्यक्ति का न केवल बाह्य रूप–रंग, पोशाखादि शामिल है, बल्कि उसकी सम्पूर्ण प्रकृति, स्वभाव, रूचि–अरूचि का तारम्य, प्रमुख इच्छाएँ व मूल प्रवृत्तियाँ, उसके विचार आदर्श और स्थायीभाव आदि सब कुछ उसमें सम्मिलित है।''

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. आर.जी सिंह , भारतीय समाज मध्यप्रदेश, हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल 1987
2. एस.पी. श्रीवास्तव : भारतीय सामाजिक समस्याएँ, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ, 1978
3. गणपति चंद्र गुप्त : हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास ,लोक भारती, इलाहाबाद, 2002
4. गोपाल राय : हिंदी उपन्यास का इतिहास , राजकमल प्रकाषन, नई दिल्ली, 2002
5. गोविंद चातक : आधुनिक हिंदी षब्दकोष, तक्षषिला प्रकाषन, नई दिल्ली, 1986